Year-8; Sept. 2017
ISSN–2231-1130
UGC Sr. No. – 48398
VEETHIKA

उषादेवी मित्रा के उपन्यासों का समीक्षात्मक अनुशीलन

आरती गौतम*

''हिन्दी उपन्यासों को नया मोड़ देने वाली उषादेवी मित्रा अपने युग की ही नहीं हिन्दी की प्रतिनिधि प्रथम महिला उपन्यासकार लेखिका है।''[1] आधुनिक युग में हिन्दी उपन्यासों में जो नवीनता में नवीनता दिखाई देती है वह अत्यधिक मात्रा में उषादेवी के उपन्यासों में विद्यमान है। उन्होनें स्त्री समस्याओं को उपन्यास का विषय बनाया । उनके उपन्यासों में उठाई गई समस्याऐं व्यक्तिगत और पारिवारिक होते हुए भी समाज व्यापी हैं और समाज व्यापी होते हुए भी व्यक्तिगत और पारिवारिक हैं। उषादेवी ने भारतीय उच्च और मध्यम वर्ग की स्त्री सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण प्रश्नों तथा उसके विविध पक्षों पर मानवतावादी दृष्टिकोण से विचार किया है। यही कारण है कि उनके उपन्यासों में भारतीय प्रतिबिम्ब होता है।

स्त्री वर्ग के प्रति ऊषादेवी मित्रा के विचार सुधारवादी थे। उन्होनें स्त्रियों के प्रति समाज में व्याप्त बुराइयों का आकलन अपने उपन्यासों में किया तथा वह एक ऐसी उपन्यासकार थी जिन्होनें अपने उपन्यास के माध्यम से स्त्री समस्याओं का यथार्थ रूप सामने रखा। उनके समय में स्त्रियों की समस्याएं सबसे अधिक जटिल थी। स्त्री का समूचा जीवन अंधविश्वास, रूढ़िवादिता अभाव एवं प्रतिबन्धों में इतना जकड़ा हुआ है। कि उनकी आत्मचेतना लुप्त प्राय होती जा रही थी। बाल विवाह, अशिक्षा, पर्दा प्रथा, बलात्कार, दहेज प्रथा, देवदासी प्रथा, अनमेल विवाह, विधवा विवाह निषेध, वेश्यावृत्ति आदि विभिन्न सामाजिक विषमताओं का दुष्परिणाम सबसे अधिक मध्यवर्गीय स्त्री को ही सहना पड़ता था। उषादेवी मित्रा ने इन समस्याओं से पीड़ित स्त्रियों की पीड़ा को पहचानकर विशेष रूप से अध्ययन करके उनके समाधन का भरसक प्रयत्न किया तथा अपने उपन्यासों में स्त्री जीवन से जुड़े मुद्दों को उठाया। सामाजिक कुरीतिया, वेश्या समस्या, विधवा विवाह, पुनर्विवाह, देवदासी प्रथा, अनमेल विवाह, उनके उपन्यासों के प्रमुख विषय रहें। ये समस्याएँ इसके पूर्व के उपन्यासों में भी मिलती हैं, किन्तु सामाजिक व्यवस्था की जिन कमियों की ओर उषादेवी के उपन्यासों मे संकेत किया गया है तथा जिस मौलिक परिवर्तन की आवश्यकता पर बल दिया गया है वह युगीन संदर्भो में नयी है।

वचन का मोल उपन्यास की नायिका कजरी ने अपने वचन का पालन करने के लिए आजीवन अविवाहित रहने का व्रत लिया। उस समय एक स्त्री का आजीवन अविवाहित रहना सामाजिक दृष्टि से असंगत समझा जाता था, लेकिन एकनिष्ठ प्रेम की दृष्टि यह स्त्री की वैयक्तिक स्वतन्त्रता का घोतक माना गया। उपन्यास के पुरूष पात्र सरोज, विनय, यतीश, कजरी को पत्नी के रूप मं अपनाना चाहते हैं लेकिन कजरी मन ही मन विनय से प्रेम करती है। सरोज की मृत्यु शैय्या पर अविवाहित रहने का वचन देने के कारण विनय से विवाह नहीं करती। ''तुम मेरी पत्नी हो कहो कजरी मैं क्वारी ही रहूंगी।''[2] कजरी अपने वचन का पालन दृढ़ता से करती है। उपन्यास का कथानक पारिवारिक तथा सामाजिक है। इसमें कजरी और मनिका के माध्यम से भारतीय तथा पाश्चात्य परम्पराओं को मानने वाले दो विरोधी परिवारों का चित्रण किया है। कजरी भारतीयता की घोतक है जबकि मनिका तथा उसका परिवार पाश्चात्य विचारों के समर्थक है।

'पिया' उपन्यास में नीलिमा और पिया को लेकर जो समस्या उठाई गई है। वह केवल उनकी अपनी समस्या को वृहत सामाजिक संदर्भो में उठाया गया है। यह कहानी केवल नीलिमा की कहानी नहीं है वरन् नीलिमा जैसी उन करोड़ों दीन हीन स्त्रियों की कहानी है जो सामाजिक स्वीकृति के अभाव में विवश होकर आत्महत्या कर बैठती है। अप्रत्यक्ष रूप से उषादेवी मित्रा ने पुनर्विवाह के प्रश्न को उठाया है और बाल विधवा नीलिमा के माध्यम से उसकी आवश्यकता पर बल दिया है। नीलिमा असहाय धनाभव से ग्रसित बाल विधवा है। दुःखी विधवा नीलिमा को स्वयं के विधवा होने में अपराध बोध महसूस होता है। विधवा होने की वजह से उसकी

* शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

माँ हरमोहिनी अपनी दोनों बेटियों कविता तथा नीलिमा में भेदभाव करती है जो उसके हृदय को आघात पहुंचाता है। ''क्या विधवा केवल अश्रद्धा की पात्र होती है? विधवा होना क्या उसका अपराध है? उसी माँ ने क्या मुझे जन्म नहीं दिया जिसने कविता को दिया है। फिर ऐसा पार्थक्य क्यों? क्या लज्जा निवारण के लिए विधवा को वस्त्र का प्रयोजन नहीं?''[3]

नीलिमा के अतिरिक्त दूसरी महत्वपूर्ण बाल विधवा पिया हैं, जिसमें आदर्श भारतीय स्त्री की मूर्ति लक्षित होती है। उसके अपने विचार है, मान्याताएँ हैं पर भीतर ही भीतर उसका जीवन निरन्तर टूटता ही गया है। निशीथ के विवाहित होने के कारण वह उससे विवाह करने में भी असमर्थ रही। इस उपन्यास में उषादेवी मित्रा ने विधवा समस्या एवं पुनर्विवाह पर ध्यान आकृष्ट किया है।

उषादेवी मित्रा के उपन्यासों की महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक यह है कि उनमें एक क्रमबद्ध विकास रेखा दृष्टिगोचित होती है। उनके अधिकांश पात्र ऐसे है जो काल्पनिक जगत के जाल से निकलकर यथार्थ जगत की व्यवहारिकता की ओर बढ़ते हुए प्रतीत होते है। पूर्व युगीन कथा परम्परा के फलस्वरूप वे आदर्श का अनुगमन करते हुए जान पड़ते है, परन्तु इतना होते हुए भी नवीन युग की समस्याओं के प्रति उदासीनता उनमें नही मिलती। उषादेवी मित्रा ने व्यक्ति स्वातन्त्र्य का समर्थन करते हुए भी सामाजिकता को महत्व दिया है। यही कारण है कि इनके पात्र उच्श्रृखंल आचरण करते हुए भी सीमा को पूर्णतः विस्मृत नहीं करते। वे शील निर्वाह करने का प्रयत्न करते है। 'सोहिनी' उपन्यास का कथानक भी समकालीन उपन्यासों तथा पूर्ववर्ती युग के कथानकों में महत्वपूर्ण हैं। इसमें मुख्य कथा असित और सोहिनी की है। इस उपन्यास में मानव की इच्छा शक्ति को असाधारण महत्व दिया गया है। सोहिनी का कथानक परम्परागत है। लेकिन 'असित' ने जिस वैज्ञानिक धरातल पर अनुसंधान के माध्यम से मृत्यु पर विजय प्राप्त करना चाहा वह आधुनिक है। वस्तुतः ऐसे कथानकों के माध्यम से लेखिका ने कथावस्तु के जिस रूप में नवीनता का समावेश किया है। वह न केवल सराहनीय है वरन् हिन्दी जगत के गौरव की वस्तु है।

'पथचारी' उपन्यास आदर्शवादी और यथार्थवादी परम्परा को आगे बढ़ाने वाला उपन्यास है। सर्वप्रथम इसका कथानक बेकारी की समस्या पर आधारित है। जो अपने आप में नवीन है।। वासुदेव और राधिका रमण मध्यम वर्ग के प्रतिनिधि है। राधिकका रमण का परिवार बेकारी के कुचक्र में फंस जाता है गुलाबी निम्न वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। और अपने पति की अकर्मण्यता तथा उत्तरदायित्व हीनता के कारण वेश्यावृत्ति अपनाने के लिए विवश होती है। वह नितिन से कहती है–''अगर मैं आपको तुष्ट कर लूंगी तो मेरे बच्चे भूखों न मरेंगे।''[4] गुलाबी एक ऐसी मां है जो अपने बच्चों के पालन पोषण के लिए मजबूरी वश वेश्या बनती है। वस्तुतः इन कथाओं के माध्यम से लेखिका आदर्श के काल्पनिक धरातल को छोड़कर वस्तु जगत की कठोर भूमि पर आ गई है।

'जीवन की मुस्कान' उपन्यास तदयुगीन समाज में व्याप्त वेश्यावृत्ति को केन्द्र में रखकर उषादेवी मित्रा ने लिखा है। उपन्यास की पात्र पूरवी वेश्या, समाज द्वारा उपेक्षित आर्थिक सम्पन्नता के अभाव में अपना और अपने परिवार का अस्तित्व बनाये रखने के लिए विवश होकर जीविकोपार्जन हेतु वेश्यावृत्ति अपनाने वाली उन कोटिक स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती हैं जो मन से पवित्र होते हुए एक साधारण स्त्री की मातृत्व की, घर गृहस्थी की कामना रखते हुए भी वेश्यावृत्ति के लिए विवश है। उषादेवी मित्रा का सम्पूर्ण ध्यान पूरवी के माध्यम से वेश्या समस्या को उठाने पर है और उसके माध्यम से व्यक्ति और समाज को इस विषय में सोचने के लिए विवश करने पर है। पूरवी वेश्यावृत्ति में आने के कारण को डाक्टर कमलेश से स्पष्ट करती है–

''मैं जान–बूझकर नहीं आई डाक्टर मैने अपने आपको यहीं पाया और जब अपनी ओर ताका मैनें तो देखा अपने को पृथ्वी की धूल कीचड़ से सना हुआ है। वहां से उठने का कोई उपाय तो था नहीं। एक ओर थी मैं लुटी हुई, नारी, दूसरी ओर असहाय गृहस्थी, मेरी क्वारी और विधवा बहने उनके बच्चे, अन्धा बाप। कमाकर उन्हें देती हूं। कभी पिता

के दर्शन कर लेती थी सो महीना भर हुआ वह भी परलोकर चल बसे। दुनिया ने पाया एक विलासिनी उच्श्रृंखल सुखी पूरवी बाई को, किन्तु उस आंसू ने सनी हाहाकार से भी पूरवी के अन्तर की नारी को उसने न पहचाना।''[5]

पूरवी अपने पिता व बहनों के लिए विवश होकर वेश्यावृत्ति करने के लिए मजबूर है, लेकिन पृथीश से उसने वास्तव में प्रेम किया और अन्त में अपनी बहन को अपनाने का पृथीश से अनुरोध कर रूग्णावस्था में मृत्यु को प्राप्त हुई। यह उपन्यास सामाजिक है। इस उपन्यास के शीर्षक से स्पष्ट है कि विपरीत परिस्थितियां जीवन में व्यंग्य की मुस्कान देती है। किन्तु जीवन की वास्तविक मुस्कान विपत्तियों में भी कर्तव्य का समुचित निर्वाह करते रहने में ही है।

'नष्टनीड़' उपन्यास भारत–पाकिस्तान विभाजन के समय सताई गई भारतीय स्त्री सुनन्दा की करूण कहानी हैं, जिसे पाकिस्तानी अत्याचारियों द्वारा बलत्कृत होना पड़ता है। सुनन्दा का स्वार्थी पति रवीन्द्र धन वैभव की लालसा लिए सुनन्दा को अत्याचार सहने के लिए पाकिस्तान में अकेला छोड़कर स्वयं भारत आ जाता है और एला से दूसरा विवाह कर लेता है। वह सुनन्दा की खबर भी नहीं लेता। पाकिस्तान की हिंसा से पीड़ित लाशों के ढेर में दर्द से तड़पती हुई सुनन्दा सुप्रकाश को मिलती है। सुनन्दा सुप्रकश के साथ हिन्दुतान में रहने लगती। यहां सब उसे बहुत आदर सम्मान देते हैं। किन्तु जैसे ही वह अपने जीवन की कटु कहानी का सत्य उजागार करती है वह दादू, नालिनी, मिस चौधरानी सबकी नजरों में उपेक्षित हो जाती है। क्योंकि समाज ने स्त्री की पवित्रता के लिए सती, असती दो शब्द बना रखे हैं तथा समय–समय पर स्त्रियों के मन और शरीर की पवित्रता पर प्रश्न चिन्ह लगाते रहते हैं। जिस पर शारीरिक अत्याचार हुआ है, जो पीड़ित, शोषित हो, उसकी अस्मत लूटी गई हो वह समाज के दृष्टिकोण से असती स्त्री है। दादू ने जब सुनन्दा के सिर पर हाथ रखा तो सुनन्दा वह कहती है। ''मत छुओ मुझे आप असत हो जाायेगें क्योंकि मैं असती हूं किन्तु स्त्री पर जो जबरन अत्याचार किया गया तब स्त्री असती कैसे हुई, पाप तो मन से हुआ करता है दैव घटित घटना पाप कैसे हो सका।''[6]

उषादेवी मित्रा के उपन्यास नष्टनीड़ में सुनन्दा के संघर्ष का तरीका अलग है क्योंकि वह खुद बताती है कि वह बलात्कार की शिकार है। सुनन्दा की चरित्र समाज की मान्यताओं पर प्रश्नचिन्ह लगाता है, साथ ही साथ स्त्री को विद्रोह की शक्ति भी देता है।

कथानक की नवीनता और मौलिकता की दृष्टि से तो उषा देवी मित्रा के उपन्यास महत्वपूर्ण हैं ही चरिण चित्रण की दृष्टि से भी उनका विशेष महत्व है। प्रत्येक अवस्था में उषा जी के पात्र अपनी गतिविधियों, क्रियाकलापों तथा विचार व्यक्त करने के लिए स्वतन्त्र है, जीवन यात्रा में कहीं भटकते है तो लेखिका उन्हें भटकने से रोकती नहीं क्योंकि भटकने में भी विचित्र आनन्द है। जीवन और उसकी सहज अनुभूति वास्तव में इसी में निहित है। इसलिए वे उपन्यासों में नीलिमा (पिया) एला, सुनन्दा (नष्टनीड़) मनिका, कजरी (वचन का मोल), रमेन (सम्मोहिता) गुलाबी, नितिन, माधुरी (पथचारी), जैसे पात्रों की सृष्टि कर पाई। विधवा स्त्रियों का चित्रण तो कथा सहित्य में उषादेवी से पहले भी बहुत हुआ है और अब भी हो रहा है लेकिन पिया और नीलिमा जैसे पात्र हिन्दी साहित्य में अमूल्य निधि है। स्त्री दुर्बलता और सफलता का जो सशक्त रूप पिया और नीलिमा में मिलता है और उन्हें जिस मनोवैज्ञानिक धरातल पर चित्रित किया गया है वह लेखिका की अभूतपूर्व सृष्टि है।

उषादेवी मित्रा ने उद्देश्य पूर्ण साहित्य सृजन कर स्त्री समस्याओं से समाज को परिचित कराया। उषादेवी मित्रा प्रेमचन्द युगीन प्रख्यात लेखिका थी। उन्होनें सामाजिक तथा व्यक्तिवादी उपन्यासों की रचना की। लगभग सभी उपन्यासों में उषादेवी मित्रा का प्रयास सामाजिक कुरीतियों से उत्पन्न पात्रों की मनः स्थिति आक्रोश और विद्रोह को चित्रित करने में रहा है, अर्थात् कार्य और कारण दोनों साथ लेकर चलने के कारण उपन्यासों में स्पष्ट व्यापक धरातल पर सामाजिक चिन्तन दृष्टिगत होता है। उषादेवी मित्रा ने अपने उपन्यासों

के माध्यम से तदयुगीन सामाजिक समस्याओं से पीड़ित स्त्री का मार्मिक वर्णन किया है।

सन्दर्भ –

1. प्रभा सक्सेना, उषादेवी मित्रा व्यक्तित्व एवं कृतित्व, 1984, पंचशील, प्रकाशन जयपुर, पृ0 269
2. उषादेवी मित्रा, वचन का मोल 1957, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृ0 57
3. उषादेवी मित्रा, पिया, 1956, सरस्वती प्रेस, बनारस, पृष्ठ–41
4. उषादेवी मित्रा, पथचारी, 1949, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृ0 128
5. उषादेवी मित्रा, जीवन की मुस्कान 1957, नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली, पृ0 211
6. उषादेवी मित्रा, नष्टनीड़ 195, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली पृ0 132